झगड़ी

कुएँ में गिरी बाल्टी को निकालने की जुगत

संजय कुमार तिवारी

कुछ दशक पहले तक गाँव के कुएँ के पास कभी एक अलग ही दुनिया बसती थी – कुएँ की गोलाकार पाल, पानी भरने आईं गपशप करती मुहल्ले की महिलाएँ, बाल्टी-बर्तनों की खनक और कुएँ में पानी से टकराती बाल्टी की छपाक की ध्वनि। सार्वजनिक कुआँ केवल जल का स्रोत नहीं था, बल्कि गाँव की महिलाओं के आपसी संवाद, समाचार आदान-प्रदान और सामाजिक मेल-जोल का केन्द्र भी था। अमूमन, घर के लिए पानी लाने की ज़िम्मेदारी मुख्यतः महिलाओं पर होती थी, जिससे उनका सामाजिक नेटवर्क मज़बूत होता था।

चित्र-1: झगड़ी

अब यदि किसी कुएँ पर पानी भरते समय बाल्टी से बँधी रस्सी खुल जाए या रस्सी टूट जाए तो क्या होगा? लोककथाओं के कोई देव आकर तो बाल्टी निकालकर देने नहीं वाले हैं। अब या तो कोई इन्सान कुएँ में उतरकर बाल्टी निकालने का साहसी कदम उठाए या कोई हुक या ऐसी ही किसी जुगाड़ का बाल्टी को बाहर निकालने में इस्तेमाल किया जा सकता है।

इसी हुकनुमा जुगाड़ को कुछ इलाकों में 'झगड़ी•' नाम से पुकारते

• *'झगड़ी' अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे - काँटा (छत्तीसगढ़), बिलइया (राजस्थान), मांजरी (निमाड़ क्षेत्र, मप्र), झग्गर (झारखण्ड)।*

हैं। जब कभी बाल्टी कुएँ में गिर जाने की घटना घटित होती, तुरन्त गाँव में उपलब्ध झगड़ी को रस्सी से बाँधकर कुएँ में डाला जाता और बाल्टी को नथने की कोशिश की जाती। कई बार बाल्टी जल्द ही नथ (अटक या फँस) जाती और बाल्टी को ऊपर खींचना आसानी-से सध जाता। कभी-कभी थोड़ा वक्त भी लगता। अक्सर अनुभवी लोग झगड़ी को ऊपर-नीचे करके, उसके वज़न में आए बदलाव को भाँपकर बाल्टी को नथने का अन्दाज़ा लगा लेते हैं।

झगड़ी, दरअसल, लोहे का साधारण-सा दिखने वाला औज़ार है जिसे गाँव का लुहार ही बना देता है। आम तौर पर लुहार पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने इस हुनर को अगली पीढ़ी को सिखाता रहता है। इसकी वजह से भारत के अलग-अलग इलाकों के ग्रामीण अंचलों में अलग-अलग आकार और प्रकार की झगड़ी दिखाई दे जाएँगी। इस प्रक्रिया में कई बार नवाचार भी होते रहते हैं। कुल मिलाकर, झगड़ी सिर्फ एक उपकरण ही नहीं है बल्कि इसमें लुहारी का हुनर, तकनीक और बाल्टी को निकालने का कौशल – सभी कुछ शामिल है। और जब बाल्टी को निकालने में कामयाबी मिल जाती है तो दर्शकों की खुशी की चीखें.... उनके बारे में जितना कहा जाए, कम ही होगा।

सामाजिक दृष्टिकोण से, झगड़ी केवल एक उपकरण नहीं थी, बल्कि आपसी सहयोग और मदद का प्रतीक थी। यह हर घर में उपलब्ध नहीं होती थी, इसलिए जिनके पास होती, वे इसे ज़रूरत पड़ने पर उपलब्ध करवा देते थे। हालाँकि, सामाजिक या व्यक्तिगत मतभेदों के कारण कभी-कभी इसे प्राप्त करना मुश्किल भी हो जाता था। झगड़ी माँगना और देना उस समय की सामाजिक परम्पराओं, विश्वास और आपसी रिश्तों का आईना था।

आपने एक कहावत तो सुनी ही होगी - आवश्यकता आविष्कार की जननी है। झगड़ी इसका जीवन्त उदाहरण थी। यह गाँव के जीवन में छोटी-सी, लेकिन अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। बढ़ते शहरीकरण, सार्वजनिक पेयजल वितरण सिस्टम, हैंडपम्प, जेटपम्प आदि के चलते पारम्परिक कुएँ हमारे जीवन से काफी दूर चले गए हैं। इसलिए स्वाभाविक है कि बाल्टी का कुएँ में गिरने का सिलसिला भी बन्द हो गया है और झगड़ी भी धीरे-धीरे विलुप्ति की कगार पर खड़ी है।

संजय कुमार तिवारी: सन् 1995 से 2007 तक *एकलव्य* के सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम के साथ जुड़कर काम किया। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, रायपुर, छत्तीसगढ़ में कार्यरत हैं।